International Journal of Sanskrit Research 2024; 10(3): 239-242

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2024; 10(3): 239-242
© 2024 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 22-02-2024
Accepted: 25-03-2024

डॉ. राघवेन्द्र
सहायक प्राध्यापक, संस्कृत विभाग, पाण्डिच्चेरी विश्वविद्यालय, पुडुच्चेरी, भारत

डॉ. अखिलेश कुमार त्रिपाठी
सहायक प्रोफेसर, एमिटी सेंटर फॉर संस्कृत एंड इंडिक स्टडीज, एमिटी यूनिवर्सिटी, हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
डॉ. राघवेन्द्र
सहायक प्राध्यापक, संस्कृत विभाग, पाण्डिच्चेरी विश्वविद्यालय, पुडुच्चेरी, भारत

निर्वचन सिद्धान्त की प्रासङ्गिकता एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती

डॉ. राघवेन्द्र, डॉ. अखिलेश कुमार त्रिपाठी

सारांश
उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्। वर्षं तद्भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः।।[1]
समुद्र के उत्तर में और हिमालय के दक्षिण में जो देश है उसका नाम भारत है और उसकी प्रजा भारती कहलाती है। इस सम्पूर्ण भारतवर्ष में समानरुप से निहित भाषा संस्कृत है भारत की सभी भाषाओं के साथ संस्कृत का मातृवत् सम्बन्ध है भारतीय प्राचीन लिपियों व वर्तमान प्रयोज्य अधिकांश लिपियों में संस्कृत का लेखन कार्य प्राप्त होता है और वर्तमान में लेखन पठन आदि कार्य हो रहे हैं यही केवल वह शक्ति है जो भारतवर्ष के एकात्मक स्वरुप की आधार स्तम्भ है संस्कृत में एक वस्तु, व्यक्ति, स्थान के बोध के लिए पदों का आधिक्य है इस कारण एक ही वस्तु की अभिव्यक्ति के लिए क्षेत्र विशेष में भिन्न- भिन्न पदों का प्रयोग होता है जैसे- अरण्यम् – "ऋच्छन्ति गच्छन्ति यत्र अथवा अर्यते गम्यते यत्र इति अरण्यम्"[2]। कहीं वनम् "वन्यते याच्यते वृष्टिप्रदानाय"[3] शब्द का प्रयोग होता है इसी तरह वेष्टिः शब्द का प्रयोग दक्षिण में धोती के लिए होता है उत्तर में अधोवस्त्रम्, अन्तरीयम्, कटिवस्त्रम् इत्यादि का प्रयोग होता है इसलिये निर्वचन सिद्धान्त के द्वारा पदसाधुत्व व सम्पूर्ण भारतवर्ष में प्रयोग भेद होने पर भी एकत्व है ऐसी सिद्धि ही नहीं होगी अपितु सभी भारतीयों में संस्कृत भाषा के साथ सभी भारतीय भाषाओं को जानने व उनके शुद्धरुप का उपयोग करने के प्रति जिज्ञासा बढेगी। निर्वचन सिद्धान्त का आदिस्रोत वेद वेदाङ्ग हैं । आधुनिक काल के भाष्यकार महर्षि दयानन्द सरस्वती ने निरुक्त के निर्वचन सिद्धान्त को आधार मानकर वेदभाष्य किया है तथा उणादिकोष में उन्होंने लौकिक पदों के निर्वचन करने पर भी बल दिया है एतदर्थ उनकी दृष्टि का अध्ययन भी इस शोधपत्र में किया गया है।

कूटशब्दः संस्कृत भाषा, महर्षि दयानन्द सरस्वती, अधोवस्त्रम्, अन्तरीयम्, कटिवस्त्रम्

प्रस्तावना
"वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का धर्म है"[4] भारत सरकार द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती का 200 वाँ जन्मदिवस मनाया जा रहा है।

[1] विष्णुपुराण 2.3.1
[2] उणादिपदानुक्रमकोषः पृ. 23
[3] निघण्टुनिर्वचनम् 1.5
[4] आर्यसमाज का तीसरा नियम

इस समय पर महर्षि दयानन्द कृत कार्यों को शोधदृष्टि से वर्तमान समाज के सम्मुख प्रस्तुत करना हमारा मौलिक कर्तव्य है | महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के अनुसार वेद सृष्टि के अन्तःभूत सभी प्रकार की ज्ञानराशि का आदि स्रोत हैं | ऐसा ही भारतीय ज्ञान परम्परा का अभिमत है | वेद को जानने के लिए छः वेदाङ्ग – शिक्षा, कल्प, छन्द, ज्योतिष, निरुक्त, व्याकरण | इन सभी छः अङ्गो का विधिवत् ज्ञान होने पर वेदविज्ञान वेदार्थ के प्रति प्रवृत्ति हो सकती है | वेद के इन छः अङ्गो को इस प्रकार विभाजित किया गया है –

छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ।।
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्
तस्मात्साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते ।।[5]

इनमें शिक्षा, निरुक्त, व्याकरण, इन तीन अङ्गो का सीधा सम्बन्ध भाषाशात्र के साथ है | शिक्षा – का विषय वर्ण विज्ञान, निरुक्त का विषय अर्थ विज्ञान है और व्याकरण का विषय पदविज्ञान है| अर्थविज्ञान के आधारभूत निरुक्त में चार प्रकार के पदों का प्रतिपादन किया गया है – "चत्वारि पदजातानि नामाख्यातोपसर्ग निपातश्च"[6] नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात | नामपदों में जिनपदों की व्युत्पत्ति धातु प्रकृति-प्रत्यय विधान से भलीभाँति होती है वे यौगिक कहलाते हैं | अन्य पद जिनकी व्युत्पत्ति धातुज आख्यातज प्रक्रिया से नहीं होती तथा वे शब्द किसी नियत अर्थ में रूढ होने से रूढ कहलाते हैं |

निरुक्त के प्रथम अध्याय के अन्तर्गत ही आचार्य यास्क कहते हैं:- इतीमानि चत्वारि पदजातान्यनुक्रान्तानि नामाख्याते चोपसर्गनिपातश्च| तत्र नामान्याख्यातजानीति शाकटायनो नैरुक्तसमयश्च । न सर्वाणीति गार्ग्यो वैयाकरणानां चैके |[7] अर्थात् चार प्रकार के पदों मे जो नाम पद है वे आख्यातज हैं, ऐसा आचार्य शाकटायन वैयाकरण एवं नैरुक्तों का मत है | आचार्य गार्ग्य का मत इसके विपरीत है कि सभी नामपद धातुज नहीं हैं |

आचार्य यास्क सम्मत नैरुक्त निर्वचन हेतु सभी नामपदों को धातुज मानते हैं वही शाकटायन सम्मत वैयाकरण भी शब्दों की व्युत्पत्ति का आधार धातु को मानते हैं |

सभी नामपद धातुज हैं ऐसा महर्षि दयानन्द सरस्वती मानते हैं तदपि वे कहते हैं " वैदिक शब्द और लौकिक संज्ञा शब्द ये सब सम्पूर्ण रूप से सिद्ध नहीं हो सकते " अर्थात् व्याकरण की सामान्य पद साधुत्वसिद्धि प्रक्रिया से सभी पद अच्छे प्रकार से सिद्ध नहीं हो सकते हैं | स्थिति में अवशिष्ट शब्दों की धातुज व्युत्पत्ति हेतु कुछ अन्य व्यवस्था करणीय है | पाणिनीय व्याकरण परम्परा में इस व्यवस्था का नाम उणादि सूत्र पाठ है |

वेदभाष्यकार वैयाकरण महर्षि दयानन्द सरस्वती कहते हैं कि – "कि अगाध शब्द सागर की थाह व्याकरण से भी नहीं मिल सकती | जो कहें कि ऐसा व्याकरण क्यों नहीं बनाया जिससे शब्द सागर से पार पहुँच जाते, तो यह समझना चाहिए कि कितने ही पोथा बनाते और जन्म जन्मान्तरों भर पढते, तो भी पार दुर्लभ ही था |[8] यह मत महाभाष्यकार पतञ्जलि सम्मत है |[9]

वैयाकरण शाकटायन से भिन्न वैयाकरणों ने जिन शब्दों को रूढि शब्द मानकर अव्युत्पन्न माना उनकी व्युत्पत्ति उणादि सूत्रों से संभव है | "उणादयो बहुलम्" सूत्र में बहुल पद इसलिए पठित है कि अल्प धातुओं से ही उणादि प्रत्ययों का विधान किया जाता है | यहाँ प्रत्ययों का प्रायः करके समुच्चय होता है सबका नहीं होता | इस प्रक्रिया में प्रकृति – प्रत्यय को मानकर सूत्रों द्वारा होने वाले कार्यों का विधान नहीं किया गया है | वेद में पठित सभी रूढ शब्दों के साधुत्व का बोध एवं नैरुक्त आचार्यो का मत भी ऐसा ही है | इसलिए जिन शब्दों के प्रकृति-प्रत्यय आदि विशिष्ट स्वरूप का ज्ञान नहीं है उनमें प्रकृति को मानकर प्रत्यय की ऊह और प्रत्यय को प्रकृति की ऊहा करनी चाहिए | एवमेव धातु प्रत्यय आदि को देखकर अनुबन्धों का ज्ञान करना चाहिए |

महर्षि दयानन्द सरस्वती कहते हैं कि उणादिपाठ में थोडे से धातुओं प्रत्यय–विधान किया हैं सो बहुल के होने से वे प्रत्यय अन्य धातुओं से भी होते हैं | इसी प्रकार प्रत्यय भी थोडे संकेतमात्र पढे हैं | सत्प्रयोगों में देखके इनमें अन्य नवीन प्रत्ययों की कल्पना कर लेनी चाहिए | जैसे:- "ऋफिड" इस शब्द से ऋ धातु से फिड प्रत्यय समझा जाता है | इसी प्रकार अन्यत्र भी जानना चाहिए तथा जितने शब्द उणादिगण से सिद्ध होते हैं, उनमें जितने कार्य सूत्रों से प्राप्त हैं वे सब नहीं होते, यह भी बहुल ग्रहण का प्रताप है |[10]

अतः महर्षि दयानन्द का मत स्पष्ट है कि वैदिक एवं लौकिक सम्पूर्ण शब्दों की सिद्धि व्याकरण की निर्धारित प्रक्रिया से नहीं हो सकती | इसलिए उणादि के सन्दर्भ में 'बहुल' से होने वाले तीन प्रकार के कार्यों से अनेकों सहस्रों शब्द सिद्ध हो सकते हैं |

अतः महर्षि दयानन्द सरस्वती नैरुक्त आचार्यों के धातुज एवं निर्वचन सिद्धान्त को पूर्णरूप से स्वीकार करते हुये

[5] पाणिनीय शिक्षा (41-42)
[6] निरुक्तम्
[7] निरुक्तम्
[8] उणादिकोष
[9] एवं हि श्रूयते बृहस्पतिरिन्द्राय दिव्यवर्ष सहस्रं प्रतिपदोक्तानां शब्दानां शब्दपरायणं प्रोवाच, न चान्तं जगाम | महान् शब्दस्य प्रयोग विषयः .....प्रयोग विषयः | महाभाष्य पस्पशाह्निक
[10] उणादिकोष

सभी शब्दों की व्युत्पत्ति को दिशा प्रदान करते हैं उसी आधार पर उनके द्वारा उणादि पर उणादिकोष नाम से उणादिवृत्ति लिखी गयी है | जिसमें उन्होने विशेष करके लौकिक शब्द और सामान्य से वैदिक लौकिक दोनों शब्द सिद्ध किये हैं | निघण्टु में जितने वैदिक शब्द हैं उनमें अधिकांश का निर्वचन वृत्ति मे किया है वृत्ति में उन्होनें शब्दों का निर्वचन किया है और धातु, प्रत्यय, अनुबन्ध आदि के बोध के लिए प्रेरित किया है |

उणादिकोष में जिन लौकिक वैदिक शब्दों का निर्वचन किया गया है | उनमें से अधिकांश शब्दों का प्रयोग भारत की सभी भाषाओं में प्रचुर रूप से पाया जाता है | उनके वर्तमान काल में प्रयोज्य भाषाओं में रूढिनिष्ठ प्रचुर शब्दसमूह है | इस सन्दर्भ में आचार्य यास्क और पतञ्जलि का अभिमत है कि ऐसे शब्द वे हैं जो किसी क्षेत्र विशेष में प्रयोग होते हैं | परन्तु दूसरे क्षेत्र में नही होते यदि वहाँ होते भी हैं तो वे किसी अन्य अर्थ का प्रतिपादन करते हैं | कुछ शब्द ऐसे हैं जिनकी प्रकृति मात्र का प्रयोग वर्तमान भाषाओं में होता है | कुछ ऐसे हैं जिनके एक शेष एक अंश मात्र का प्रयोग होता है | इसलिए धातुज सिद्धान्त से ये सम्भव है कि उन शब्दों को रूढि मानकर उनके प्रकृति प्रत्यय की ऊहा करनी चाहिए जिससे भाषाशात्र के अनुवाद, अनुसन्धान, प्रकृति भाषा संगणक विज्ञान, भाषा की तकनीकी शब्दावली, भाषादर्शन, भाषाविज्ञान, भाषागत वैमत्य के स्थान भाषा इत्यादि क्षेत्रों को दिशा प्राप्त होगी तथा वर्तमान में नयी शिक्षा नीति के बहुभाषा बोध के लिए अत्यन्त उपादेय निर्वचन सिद्धान्त है| ऐसे

जिन शब्दों के सम- विषम, एकांश, प्रकृति का प्रयोग भारत की विविध भाषाओं में होता है उदाहरण स्वरूप उन शब्दों का उणादिकोष में निर्वचन –

1. **कारु:** - करोतीति कारु:, कर्ता शिल्पी वा
2. **वायु:** - वाति गच्छति जानाति पवन: परमेश्वरो वा
3. **आशु:** - अश्नुते व्याप्नोति शीघ्रम् | अश्नुते स योध्वानमिति आशु: | अश्यते भुज्यते शीघ्रमिति आशु:|
4. **स्नायु:** - स्नाति शोधत्यङ्गनीति आशु:, नादी वा |
5. **जरायु:** - जरां जीर्णतामेतीति जरायु:| गर्भाशयो, गर्भावरण वा |
6. **अणु:** - अणाति शब्दायतीति अणु: अतिसूक्ष्मं वा |
7. **वासु:** - वसति जगदस्मिन् सर्वस्मिन् ना यो वसति स वासु: ईश्वर: |
8. **पायु;** - पाति रक्षति स पायु: रक्षक:, गुदेन्द्रियं वा |
9. **बन्धु:** - प्रेम्णा बध्नातीति बन्धु: सज्जनो वा |
10. **पशु:** - पश्यति येन वा स पशु: अग्नि:, पश्यति जानाति स्वार्थमिति पशु: | गवादि |
11. **तुण्डिल:** - तुण्डति तोति पृथक् करोति स तुण्डिल: | उच्चनाभिर्जनो वा |
12. **सेतु:** - सिनोति बध्नातीति, सेतु: |
13. **वास्तु:** - वसन्ति प्राणिनो यत्र तद् वस्तु, गृहं वा |
14. **केतु:** - चायते पूजयति निशामति श्रावयति वा स केतु:|
15. **कमठ:** - कामयतेसौ कमठ:, कच्छपो वा | कमठमिति भाण्ड भेदो वा |
16. **कुण्डलं** – कुण्डति दहतीति कुण्डलं, वलयं पाशं कर्णभूषण वा |
17. **सरल:** - सरति सर्वत्र गच्छतीति सरल:, अकुटिल: उदारो वा |
18. **कम्बल:** - काम्यतेभीप्स्यते य: स: कम्बल: ऊर्णाविकार: |
19. **मलम्** – यन्मृज्यते शोध्यते तत् मलम्, पुरीषं पापं कृपण: पुरुषो वा |
20. **फण्डम्** – फणति गच्छत्यत्रेति फण्ड: पन्था:, फण्डम् उदरं वा |
21. **लवङ्गम्** – लुनात्यनेन स लवङ्ग:, ओषधिर्वा |
22. **मृदङ्ग:** - मृदनाति यं स मृदङ्ग:, वाद्यभेदो वा |
23. **अङ्गम्** - [अमति] गच्छति प्राप्नोति कर्माणि विषयान् वा येन तत् अङ्गम् |
24. **अङ्कूष:** - अङक्यते लक्ष्यते येन दिशा स: अङ्कुष: |
25. **अनलः** – अनिति जीवतिअनेन इति अनलः |
    अनीकम् – अनिति जीवयति सर्वान् प्राणिना यत् तत् अनीकम् |
26. **अन्तः** – अमति गच्छति इति अन्तः |
27. **अरण्यम्** – ऋच्छन्ति गच्छन्ति यत्र अथवा अर्यते गम्यते यत्र इति अरण्यम् |
28. **अरुण:** - ऋच्छति इयर्ति वा गच्छति प्राप्नोति इति अरुण: |
29. **चतुरः**- चतते याचते स चतुरः, दक्षः कुशलो वा।
30. **अङ्कुरः**- अङ्कयते लक्ष्यते निःसृतं दृश्यते स अङ्कुरः।

निष्कर्ष

हमने यहाँ दो प्राचीन सिद्धान्तों (1. यौगिक 2. रूढ) का विश्लेषण किया है इनमें महर्षि दयानन्द सरस्वती के साहित्यावलोकन से ज्ञात होता है कि वे निर्वचन सिद्धान्त के प्रबल समर्थक आधुनिककालीन भाष्यकार हैं यह उनके वैशिष्ट्य के साथ-साथ भारत एवं विश्व की भाषा सम्बन्धी विषयों की समस्याओं को सुलझाता हुआ प्रतीत होता है। भारत अपनी विविध-भाषाओं में रचित ग्रन्थों से साहित्य समृद्ध राष्ट्र है यह समृद्धि उसे अन्य राष्ट्रों से अद्वितीय रुप में स्थापित करती है।

इस अद्वितीयता के कारण भारत का भाषिक आन्तरिक

एकत्व शक्ति के बोध के अभाव में भाषा वैमत्य पर चर्चा होती रहती है परन्तु यह निर्वचन सिद्धान्त भारत की सभी भाषओं में आन्तरिक एकत्व को दृढता प्रदान करता है। भारत की सभी भाषायें जो बाह्य रुप से भिन्न प्रतीत होती हैं वे आन्तरिक रुप से एकरुप में समाहित होती दिखती हैं जिन शब्दों का निर्वचन उणादि-कोष से यहाँ उद्धृत किया है वे भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में प्रयोज्यमान शब्द हैं।

एतदर्थ संस्कृतभाषा के पदों का निर्वचन करना चाहिए जिससे किसी भी क्षेत्र में प्रयोग में आने वाले पदों का साधुत्वसिद्ध हो तथा समाज को एक-दूसरे क्षेत्र में प्रयुक्त शब्दों के अर्थों का बोध हो सके जिस प्रकार सम्पूर्ण भारत सांस्कृतिक रूप से एक है उसी तरह भाषिक रुप से एक है। भारत की सांस्कृतिक विरासत का मूल संस्कृत भाषा में निहित है और संस्कृत सभी भारतीय भाषाओं में निहित है संस्कृत भारत की विविध भाषाओं की लिपिओं से अभिव्यक्त होती है भारतीय भाषायें यदि शरीर रूपी अभिव्यक्ति हैं तो उनकी आत्मा संस्कृत है।

निर्वचनसिद्धान्त पुनः पुनः अपने वास्तविक स्वरुप को स्मरण कराता है और श्रम करने के ले प्रेरित करता है यही इस सिद्धान्त की प्रासङ्गिकता है। ज्ञान व व्यवहार की अन्यविधाओं में भी जो स्व स्वरुप को सतत प्रवाह में नहीं रखता है वह रूढ हो जाता है और वह अपने मूल स्वरूप को भूल जाता है और समाप्ति की दिशा की ओर प्रवृत्त हो जाता है।

अतः वर्तमान में भी पूर्वोक्त सिद्धान्तों के आधार पर निर्वचन करने का प्रयास सतत करते रहना चाहिए।

सन्दर्भ

1. उणादिकोष, म. दयानन्द सरस्वती, सम्पादक- युधिष्ठिर मीमांसक, रामलाल कपूर ट्रष्ट, रेवली सोनीपत, 2000
2. निरुक्तवृत्ति, प्रो. ज्ञानप्रकाश शास्त्री, परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2020
3. आचार्ययास्क का पदचतुष्चट्य सिद्धान्त, प्रो. ज्ञानप्रकाश शास्त्री, संस्कृत ग्रन्थागार,दिल्ली, 2002
4. भाषा का इतिहास, पं भगवदत्त रिसर्च स्कालर, विजय कुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली, 2012
5. संस्कृत भाषा, टी.बरो, अनु. भोलाशंकर व्यास, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2014
6. महाभाष्यम् हिन्दी व्याख्या सहितम् (प्रथम भाग), पतञ्जलि, व्याख्याकार- युधिष्ठिर मीमांसक, रामलाल कपूर ट्रष्ट, रेवली सोनीपत, 2018
7. निघण्टु निर्वचनम्, देवराजयज्वा, सम्पादक- आचार्य सुद्युम्न, रामलाल कपूर ट्रष्ट, रेवली सोनीपत, 2016